टूटी हुई चुप, मग़र आवाज़ बाक़ी है

शैल बाला

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Shail Bala 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

Author Address: Z-508, amrapali silicon city, Sector-76, Noida – 201301,U.P
Author Email: kumarishailb@gmail.com, ritesh.anand@gmail.com

ISBN: 978-93-7139-997-5

Cover Design: Shubham Verma
Typesetting: Sagar

First Edition: June 2025

आत्म कथ्य !

"मन के पिंजड़े में जब भावों का पंछी फड़फड़ाता है,

कागज़ के पन्नो पर, कुछ शब्द संवर जाता है

मैं नारी हूँ, नारी जीवन के मर्मस्पर्शी क्षणों को कलमबद्ध करना मेरी प्रकृति है। नारी मन के अन्तः गह्वर में पैठ उसकी व्यथा को शब्दों में उकेरना और उस दर्द के एहसास को उजगार करना

मेरी लेखनी की प्रवृति।

क्योंकि नारी भाव है, भावना है, प्रेम है, प्रकृति है, दुःख दर्द और त्याग का इतिहास है। उसी इतिहास का एक पन्ना मैं भी हूँ। मैंने नारी के विभिन्न विधाओं को जीया है। उन विधाओं में से पीड़ा की विधा, नारी मर्म को मर्माहत और गाथा को मर्मस्पर्शी बनाता है। नारी हमेशा प्रताड़ना के विष को पीकर भी संतोष की डोर को थामे रखती है। प्रेम और पीड़ा के आदर्श को प्रस्तुत करने वाली - भारतीय नारी पीड़ा, विरह, घुटन, प्रताड़ना, ठोकर, अलगाव और बलात के दंश से आज मर्माहत है।

इच्छा है-

आज निर्भीक हो, वेदना के मर्म को मुखर कर दूँ।

अपने अंतर्द्वंद और पीड़ा को भी सबकी नज़र कर दूँ।

वेदना के बन्द सारे, मैं लिखूँगी खोल कर और लिखूँगी कड़वे सच, भाव मिश्री घोलकर अतः मैंने नारी के विभिन्न विद्याओं को अपनी कविता में दर्शाया है।

इस हेतु मैंने "मन का पीर, संयोग, स्नेह, कशिश, तृषित नारी, सावन की झड़ी, प्रतीक्षा, पीड़ा सँग मनुहार, दीपशिखा, सूना कानन, माँ का दर्द आदि कविताओं को कलम बद्ध कर, आपके समक्ष प्रस्तुत करने की कोशिश की है।

इसके अलावे जीवन के वास्तविक धरातल पर मैंने अनेकों उतार-चढ़ाव देखे हैं। जीवन के सात दशकों में मैंने बहुत से सच को जीया है, महसूस किया है। देश और समाज में होते हुए अनैतिकता भ्रष्टाचार, आतंक और बलात् पर मंथन किया है। हमेशा से सामाजिक और राष्ट्रीय विभिषिका से आतंकित और मर्माहत रही हूँ।

क्यूंकि आज भी-

ज़िन्दगी और मौत में है कुछ क्षणों का फ़ासला,

ज़िन्दगी की राह पर है मौत का ही काफ़िला।

अतः जितना देखा समझा और जाना उसे कागज के पन्नों पर उकेर कर आपके समक्ष प्रस्तुत करना मेरा अभिष्ठ बन गया है। यह आज़ाद भारत है, गाँधी सुभाष के सपनों का भारत । हम स्वतन्त्र हैं किन्तु पारिस्थैतिक गतिविधियों को देखकर में दुविधाग्रस्त हूँ।

"ग़र स्वतन्त्रता सौगात है तो, नाश का त्योहार क्यूँ ?

मूल मंत्र प्रेम है तो, त्राहि और चीत्कार क्यों?

इस सत्य को मेरा मन स्वीकारना नहीं चाहता।

इस हेतु मेरी एक कविता है,

कौन कहता है कि हम आज़ाद है,

क्या यही आज़ादी है और हम आज़ाद हैं।

लाशों के ढेर पर , सपने और साध हैं।

इस संदर्भ में मेरी कवितायें हैं — मातृभूमि का दर्द, लाशों के ढेर पर, उड़ान, आदमी, विडम्बना, आधुनिक भारत का सच, पाप की नदी, अन्तहीन दिशा आदि जो आज के सच से आपको रूबरू करायेगा इसके अतिरिक्त - लाशों के ढेर पर इंसान, गरीबी , धरती का कोप, छक्के आदि कवितायें आपके सामने प्रस्तुत करने की एक छोटी सी कोशिश है, आशा है आपको पसंद आये

आपकी प्रतिक्रिया के इंतज़ार में,

शैल बाला

परिचय

प्रिय पाठको,

मैं शैल हूँ,

शैल की तरह सहे हैं, न जाने कितने विरह।

मेरी ज़िन्दगी का सच है—

वेदना के पाल उड़ते, ज़िन्दगी की नाव चलती,

छू कर किनारे को चली, फिर भी किनारे को मचलती।

क्योंकि -

है जीवन बन्धन तृषित मन,

उद्वेलित मेरे आद्र नयन,

नित ले लेकर श्रृगार नया,

दर्द करता मेरा अभिनन्दन।

ज़िन्दगी आजतक पीड़ा सँग क्रीड़ा करती रही है।सुख के अंतहीन संभावनाओं के बीच बैठी विचलित मैं, अपने आपको रोकने का पुरजोर प्रयास कर रही हूँ। फिर भी एक याद हमेशा कुरेदती है मन को।

स्मृति के क्षितिज पर मूर्त हो उठता है, वह प्यारा सा चुम्बन, स्नेहिल हाथों का स्पर्श, खिलखिलाता बचपन ।

काल चक्र की धूरी में - पिसता , चिखता शैशव । मृत्यु से अपरिचित, निर्बोध छोड़ आई थी स्नेहांश को, मृत्यु की गोद में। पितृहीनता के एहसास संग ही बिताया है, अपना ख़ामोश बचपन ।

ऐसा नहीं कि मैं किसी साधारण परिवार से थी। ननिहाल, ददिहाल दोनों परिवार ज़मींदार थे ।

पिता दिल्ली में एस. डी. ओ. के पद पर कार्यरत्त थे। बड़ा ही सुखमय बचपन था। किन्तु भाग्य के खेल निराले हैं- घर आते समय ट्रेन से गिर कर (30) तीस वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हो गई।

मैं उस वक्त मात्र (5) पाँच वर्ष की थी। किन्तु वह दृश्य आज भी मुझे याद है। और वर्तमान में उम्र के चौथे पड़ाव पर पहुँच कर भी, मैं उस दर्द से निकल नहीं पायी हूँ।

मेरे कोरों की बूंदों में नहीं मधुमास है हँसता,

मेरी पीड़ा की दुनिया में नहीं घरबार है बसता।

बिखरे गीत की पंक्ति, बनाता स्नेह गर मोती

तो बहते आँसुओ की धार, बड़े सुख चैन से ढोती।

हमेशा, हर वक़्त लगता था

जीवन को तड़प देकर, गए क्यों दूर वे हमसे,

अब देगा सहारा कौन, जिन्दगी की राह पर थम के ।

इस भाव से उत्प्रेरित हो मैने बारह वर्ष की उम्र में पहली कविता अपने पिता के नाम लिखा।

फिर बढ़ते उम्र के साथ स्कूल से कॉलेज तक अपनी कविता नज़र करती रही। वर्ष 1970 के बाद लोग (कविगण) मुझे साहित्यिक संस्थानों में निमंत्रित करने लगे। यहाँ से मेरी यात्रा शुरु हुई...

मैं रचनाओं को मंच, देने लगी। जिला और जिले के बाहर मेरी अनेकों कवितायें छपती रही ।

दो-चार साझा काव्य संग्रह में भी छपा। किन्तु परिस्थिति विशेष के कारण मैं, अपना काव्य संग्रह प्रकाशित नहीं करा पायी। मेरा सपना अधूरा रहा। आज बेटे के प्रयास से अपने सपने को पूरा करने जा रही हूँ।

आशा है मेरी कविता पाठकों के हृदय तक पहुंचेंगी और वे मेरी भावनाओं के सरोवर में गोते लगा कर मुझे कृत-कृत कर देंगे। मेरी आश को विश्वास देकर मुझे बड़भागी बनने का सौभाग्य प्रदान करेंगे-

बड़भागी बनने दो मुझको, खुद को तृप्त कर पाऊँ।

तुमको पूर्णतः तृप्त कर सकूँ, ऐसा गीत कहाँ से लाऊँ,।

कुछ बूँदें अपने स्नेह घट से, गर मुझमें ढल जाने दो,

विह्वल अन्तर तर कर सकूँ, स्नेह का हक़ मुझको पाने दो।

आपकी प्रतिक्रिया के इंतज़ार में,

शैल बाला

समर्पण

स्मृतिशेष-

पिता शिवनारायण प्रसाद जो मेरी कविता है, जन्मदाता हैं।

माँ विमला देवी , जिनकी व्यथा से उपजी है मेरी वेदना, जिनके बगैर कुछ भी संभव नहीं था,

उनके श्री-चरणों में समर्पित :-

''शैल''

अनुक्रमणिका

मैं नारी 1

कविता मय 2
नारी 3
एक सैनिक पत्नी की रबानी, उसकी जुबानी 5
मेरे गीत 7
संयोग 8
पैबंद 10
ढल जाने दो 12
सूना कानन 14
बिखरे पन्ने 16
अवसाद 17
स्नेह 19
तृषित नारी 20
नन्ही 22
नारी जीवन का अनुताप 24
फिर सुबह होगी..26
खामोश बचपन..28
मन का पीर 30
साध 31
कोरा कैनवास 33

तुम ही तुम 34
मोम सा जीवन 35
बेसबब्र जिन्दगी 37
सावन की झड़ी 38
क़शिश 40
सुखद सौंध 41
माँ का दर्द 43
कब तक 45
पीड़ा संग मनुहार 46
नम आँखें 48
टूटती साँस 49
तुच्छ जीवन 50
दीपशिखा (गीत) 52
धूप-छाँही खेल 54
हतभागिनी (विधवा) 55
आँखें 57
"प्रतीक्षा" 59

मैं देश 60

विडम्बना 61
मातृ भूमि का दर्द 63
ओहदा 64
लाशों के ढेर पर 66
आदमी 68
पश्चाताप 70
उड़ान 72
नदी और बाढ़ 73
प्रश्न चिह्न 76
न्याय (मुक्ति की गुहार) 78

बाल-श्रमिक 80

मैं समाज 81

गाँव की धूल 82

दो छक्के 84

कुछ थोड़ा सा 85

शख़्सियत 86

दीपावली 88

पाषाण 89

रिश्तों की क़ैद में..91

भूख 93

मृगतृष्णा 95

जेठ की दुपहरिया..96

दण्ड 98

फागुन 99

बाल-श्रमिक 101

कुहू (मेरी पोती) 102

नन्ही 104

धन्यवाद। 106

संक्षिप्त परिचय 107

मैं नारी

कविता मय

कविता मय को पियो तो, अस्तित्व तुम्हारा जागे।
पाप कर्म में लिप्ति से, अन्तः मन तेरा भागे। [1]

युग स्रष्टा तुम, युग द्रष्टा तुम, अपनी गहराई मापो
नश्वर तन की भित्ति पर, मत, जीवन का सच आंको । [2]

व्यस्त और बड़े होने का, अहं जो तुममे समाया ।
ऊँचाई से झांक कर देखो, क्या खोया, क्या पाया । [3]

बड़भागी बनने का तुमको, तब सम्मान मिलेगा।
नीचे वालों को प्रेमका, जब प्रतिदान मिलेगा [5]

हाथ थाम कर, मेरा सहृदय, तुम भी डुबकी लगा लो।
शांति की गहराई कितनी, थाह तो थोड़ी पालो। [6]

तृप्ति का सुख दे दो जग को, प्रेम की राह पर चलकर ।
आशीष के फूल बिखेर सकूं मैं, आँचल में भर-भर कर | [7]

नारी

नारी धरती है धात्री है, धीरा समीरा,
नारी गोदावरी गंगा है, यमुना की तीरा।

नारी सेवा है ममता है, सृष्टि शरीरा,
नारी खामोश आँसू, चुप सहती है पीड़ा।

नारी सौरभ है, सौम्या है, स्नेहा अधीरा,
नारी कर्मा है धर्मा है, तेजस्वनी वीरा।

नारी आँगन की अँगना है, तुलसी तपस्वनी,
नारी कामिनी, दामिनी, है दुर्गा तेजस्वनी ॥

नारी विद्या है, वैभव, गुणशीला अनुपा,
नारी माया की काया है, अन्नपूर्णा बहुरूपा।

नारी काली है, दुर्गा है, रौद्रा भवानी,
नारी रज़िया है, लक्ष्मी है, शक्ति बखानी।

नारी कृति है, कविता है, अस्मिता उर्द्धगामिनी,
नारी वीणा की लय है मृदुता की स्वामिनी।

नारी उर्जा है, उष्मा है, निष्ठा की जननी,
नारी सीता, सावित्री है, मृत्यु विखण्डिनी ।

नारी श्रद्धा, सेवा, दया बहुकरनी,
नारी माँ है मातृत्व, गुण अनुकरनी ।

नारी सम्पूर्ण सृष्टि है, माँ शब्द वाणी,
नारी गुणवत्ता, सतयुग द्वापर त्रेता बखानी ॥

एक सैनिक पत्नी की रवानी, उसकी जुबानी

देश के वीर जवानों की गाथा,
समाहित है, मिट्टी के कण-कण में।
सेवा करूँ उस देश भक्त की,
यही अभिलाषा थी मेरे मन में ॥1॥

सचमुच, पूरे हुए सपन, बनी-
सैनिक संगिनी सौभाग्य मिला।
त्याग तपस्या से फल मिलता सोंच,
हृदय का फूल खिला ॥2॥

पथ काँटो का, चुना था मैंने
झंझा भी होंगे जीवन में।
किन्तु हर परिस्थिति को झेलने का-
अदम्य साहस है मेरे मन में ॥3॥

प्रणवद्ध जीवन, अपना,
मातृभूमि के नाम किया।
प्रेरणास्रोत बनकर, हरदम पति को
कर्तव्य त्याग का, भान दिया ॥4॥

मैं पत्नी हूँ, एक सैनिक की,
दुविधा ग्रस्त, जीवन है, हर क्षण।
जीवन मरण की, परिभाषा में,
दिल कहता, माटी है, यह तन ॥5॥

सर्वस्व समर्पित, देश की ख़ातिर,
आधी जीकर तिल-तिल मरूंगी।
वीर सिपाही की, वीर भार्या मैं-
दंश सहूंगी, उफ्फ न करूँगी ॥6॥

संतोष सुधा, बनकर कहता,
नश्वर तन की, भित्ति पर तुम ।
एक नया आयाम लिखो
जीवन की सार्थकता के कॉलम में -
तुम अमर त्याग का रंग भरो ॥7॥

भाग्य करता, फैसला
दुख मिले दुख मिले या सुख मिले।
इस तथ्य पर जीवन समर्पित ।
भाव की, कुछ पंक्तियाँ

सरहद पर वीर सैनिक को समर्पित।

मेरे गीत

तुम हमारी, प्रेरणा हो, मैं तुम्हारी, प्यास हूँ।
तुम हो त्यागी, देश गौरव, मैं प्रेम मयी त्याग हूँ।

मेरे प्रणय के सारे पल को, लौटा दो, तुम मेरे पास।
मेरी प्रतिध्वनि, तेरा संम्बल, उसपर ही रखना विश्वास।

मैं आंगन की, अंगना तेरी, मेरे विरह की एक एक सांस।
बस तुमको, फौलाद बना दे, यही होगा, मेरा मधुमास।

तेरी निष्ठा, सावन मेरा, विजय तुम्हारा मेरा पाश।
तुम हो वीर चूड़ावत मेरे, मुझमे में, हाड़ा सा विश्वास।

तमन्नाओं के दीप जलाकर, रसता तेरा करूँ, उजगार।
जंग में तांडव नृत्य मचाकर, दुश्मन का करना संहार।

फैला है संग्राम, चतुर्दिक, मोह की भंगिया भूलो आज।
कर्मयोगी तुम, मेरे अर्जुन, मातृभूमि की रखना लाज।

धरती है खूबसूरत दुल्हन, आंचल तिरंगा रहे बस याद।
रहे --- बस --- याद।

संयोग

ठोकरों की, अन्धेरी बस्ती है,
अन्धे हुये, सब लोग हैं ।
मिलता नहीं है, प्यार सबको,
मिलना यहाँ, संयोग है ।।

हर सीने में, आग जलती,
उठता नहीं है, पर धुआँ ।
काले जग की, कालिमा में,
धुन्ध दिखें, किसको कहाँ ।।

ममता की, बग़िया है, सूनी,
करूणा के नहीं, फूल खिलते ।
आकांक्षा का, मधुप भटकता,
स्वाद नहीं, बस ! शूल मिलते ।।

दर्द का, गहरा घुप्प धुआँ,
फैला, हर मकान में ।
नहीं कुसुम, बस काटें खिलते,
हृदय के, गुलदान में ।।

मींच ली है, हमने आँखें,
जग की आँखें, देख कातर |
हृदय वीणा ने, तार छेड़ा,
निकला बस! दर्दीला स्वर ।।

पैबंद

ओढ़ गुजारा था जो बचपन
चिथड़े चादर में, दुख के
भर न सकी हूँ, स्नेह से गागर -
आज, अभी तक, मैं सुख से l

छाया रहता घुप्प अंधेरा
बीती यादों का मन पर
लाख छुपाऊं उभर ही आता -
बनके फफोले सा तन पर।

फट के फफोले, रिसते है जब
मन बदली से आँसू बरसता,
आँसू की बूँदों से मुखरित -
विरह गीत कागज पर सजता,

लाख चुनूं मैं, सुख के मोती-
फिर भी दु:ख के काटें चुभते
लाख लगाऊँ, स्नेह का मरहम -
दाग़ दुखों के फिर भी न मिटते

फटी है इतनी दुख से चादर
सुख उस पर पैबन्द सा दिखता
फटी हुई चादर पर भला कह -
कब तक था पैबंद वह टिकता l

चादर के चिथड़ों से, छूटकर
सुख के सब, पैबंद निकल गए
जैसे फैली धूप पर बदली -
फिर से चारो ओर घिर गए l

अब तो, आँसू की बूँदों से
छंदो की लड़ियां गुथा करती हूं
चिथड़ों को प्रेम के धागों से फिर-
कर कोशिश, बुना करती हूंl

शायद प्रेम के धागे से ही,
पैबन्दों को टाँक सकूँ मैं
पैबंद की परिधि में सिमट कर -
सुख की सीमा नाप सकूं मैं l

ढल जाने दो

मैं कोने में पड़ी ग्लास सी,
कविता मय को तरस रही हूँ।
अपनी लघुता पर किंचित
-खुद ही खुद पर बरस रही हूँ।

इच्छा है कविता सागर से,
अंजली भर जल लाऊँ।
इस घुटन भरी दुनिया को
-कुछ सत्य सार दे पाऊँ ।

किन्तु लगता बड़ा कठिन हैं,
सत्य इसे समझाना।
जीवन भर जो बुना है इसने
झूठ का ताना - बाना ।

लिप्त स्वार्थ में बैठा मानव,
निज के ही घेरे में।
कहो रौशनी कैसे पहुँचाऊँ
मन के अँधेरे में।

विस्तृत सागर सा कविता जल,
चुल्लू भर भी पाऊँ कैसे !
अपनी इच्छाओं की बाती
बिना तेल जलाऊँ कैसे।

फिर भी इच्छाओं की बाती,
जलती है इस मन में,
मुझको ज्ञान का परस मिले बस,
साध यही जीवन में।

बड़भागी बनने दो मुझको,
खुद को तृप्त कर पाऊँ
तुमको पूर्णतः तृप्त कर सकूँ
ऐसा गीत कहाँ से लाऊँ।

कुछ बूँदें कविता घट से,
गर, मुझमें ढल जाने दो ।
विह्वल अन्तर तर कर सकूँ,
हक मुझको पाने दो

सूना कानन

तुम सुन्दर, तेरा मन सुन्दर तर
सुन्दर तम्, है तेरी बाहे,

जहाँ सिमट तेरे चेहरे पर
थम जाती है मेरी निगाहें।

तुम मानस से, कभी नहीं हटते,
दिवस सात काटे, नहीं कटते।

पल-पल प्रतिपल, मुझ विरहन को -
लगता है, हर पल तुम तकते।

कैसे भूलू तेरी निगाहें
उहापोह में डूबी आहें ।

मिलूँ पिया मैं कैसे, हर पल
बड़ी दूर है, अपनी राहें ।

इंतजार मेरे कण-कण में,
अबुझ प्यास है मेरे मन में ।

अब भी तो आ जाओ प्रिय
पगली के सूने कानन में।

बिखरे पन्ने

आज,
वर्त्तमान की धुंध में,
परिस्थितियों के संघात से,
बिखरा पड़ा है-सूखे पत्तों की तरह।
जो, दर्द के मौसम मे
डाली से टूट, पृथ्वी पर गिर
करवटें बदल-बदल,
धूल में मिल रहा है।
मेरी ज़िन्दगी की तरह।

सामने है यादों का समंदर,
जीवन यौवन का मधुमास
भोगा अभिशाप टूटती है साँस,
बिखरे पन्नों की तरह क्षतविक्षत।

अवसाद

जीवन जीवन पर भार बना,
कुण्ठा में बीता है बचपन ।
लिखने को गाथा, व्याकुल है
दर्द भरा, वैरागी मन

कुण्ठाओं की, कड़ी जोड़कर,
जीवन का इतिहास लिखूँगी ।
विश्वास के टूटे मूल्यों का-
सूत्र नहीं, संत्रास लिखूँगी।

जीवन मूल्यों के, पन्नों पर,
तृप्ति नहीं, बस, प्यास लिखूँगी।
दर्द को कूची में भर भरकर,
विपदा का, विन्यास लिखूँगी ।

संबंधों की, पीड़ा से संचित,
भीगा हर, एहसास लिखूँगी।
भीगे आँखों के, काजल से,
टूटा हर, विश्वास लिखूँगी।

क्षत - विक्षत, अनुभूतियों का
संवेदिल, अन्तर्नाद लिखूँगी
नव सृजन, प्रेम - प्रवृति का करने-
मैं सारे अवसाद लिखूँगी |

स्नेह

पिघलने लगा है, स्नेह का मोम,
ढीला पड़ा, ममता का पाश ।
आगे - पीछे, ढूंढ रही हूँ ---- -
परस प्यार का, मैं चुपचाप ॥१॥

चुप्पी की, सुनसान रात है,
डगर प्यार का, देखुँ कैसे ।
प्यार के मध्यम, लौ उष्मा से ---
अपना अन्तर, सेकूँ कैसे ॥२॥

अन्तर के गह्वर में संचित,
ममता का है, गंगा जल ।
चुल्लु में भरने को, नहीं क्यों ?
होता कोई, आज विकल ॥३॥

चिर विकास के, चौकसबन्द में,
बन्द हुआ क्यों ? स्नेह कपाट ।
उत्तर की, आकांक्षा में, द्रवित ----
ममता का, चेहरा, शुन्य सपाट ॥४॥

तृषित नारी

माँग भरा सिन्दुर है उसका
सजा, बिन्दी रुप श्रृंगार से ।
मन की दुल्हन, सजी न अब तक,
सँवरी न, कभी वह प्यार से ॥

ढोती रही वह, रीत प्रीत की,
पाया नहीं कभी अपनापन ।
कर्तव्य त्याग की बेदी पर
बलिदान किया, सारा जीवन ॥

उतुगं शिखर पर, प्रेम का पाहुन,
नीचे तकती, प्यासी आँख,
बनके चकोरी चाँद को तकती,
लिये मिलन की, मन में प्यास ॥

क्यों ? धुधँला सा, दिन है उसका,
साँझ भी, काली रात है ।
प्रेम विहीन जीवन, बस! जैसे-----
कफन विहीन, एक लाश है ॥

चिथड़े-चीथड़े उड़े हैं उसके,
मन आँगन। में, उड़ता। धूल ।
प्रेम का पौधा, सिंचित कर भी,
उगा सकी ना, प्यार के फूल ॥

नन्ही

मन के झरोखे से, दूर तक झांकती हूँ,
नन्ही की आकृति को, अल्पना सा आँकती हूँ।

यादों के चित्र देख, बनाती हूं पगचिन्ह,
समय के अन्तराल पर, छोटा-बड़ा भिन्न-भिन्न |

यादों को उसकी मैं, भावों से तौलती है,
खुद ही मुस्का कर, तुतला कर बोलती हूँ।

मेरे अंतस के पट, आकर वह खोलती है,
बड़ी-बड़ी आँखों से, जैसे वह बोलती है।

चुपके से आती वह, आकर लुभाती वह,
तरसा कर मन को, छलनी कर जाती वह।

तुतलाते स्वर में, गूंज लिए प्यार की,
पहुँचती है मुझ तक झूमती बहार सी।

बड़ी-बड़ी आँखों में, शोखियों के लिए साज,
प्यारी सी भोली वह, नटखट और नखरेबाज।

उसके पावों के रुन झुन से, सपने सजाती हूँ,
सपनों के पल- छिन पर, खुश हो जाती हूँ।

खुशी से भीगता है, नयन कोर, मचता हृदय में शोर
नन्हीं के थिरकन पर क्यों मेरा नहीं कोई जोर ?।

नारी जीवन का अनुताप

आज कहूँगी, कौन सी पीड़ा
नारी जीवन का अनुताप

अवगुन्ठन की तपिश झेलकर वह
कैसे जीती है चुप चाप।

क्षत-विक्षत अनुभूतियों का सारा
संवेदिल अन्तर्नाद कहूँगी

नव सृजन प्रेम प्रवृति का करने
मैं सारे अवसाद कहूँगी।

जिन आँखो से मिला है सबकुछ
उन आँखो की बात कहूँ

कह दूँ अपनी सारी पीड़ा

या पीड़ा चुपचाप सहूँ।

चुभता है अन्तस में मेरे
तीर चुभा जो आँखो से

कभी प्यार के रंग सुनहरे
देखे थे जिन आँखों से ।

देखी थी खामोश शरारत
अपनी इबादत आँखों में ।

एक छोटा सा ताज़महल भी
कभी दिखा था जिन आँखों में ।

जिन आँखों में प्यार छलकता,
मैने देखा था जो कभी ।

गिरा नहीं वह बून्द सुधा बन
अन्तस के भू पर यहाँ कभी ।

फिर सुबह होगी

प्रेम रश्मि प्रज्ज्वलित था,
थे बड़े अनमोल क्षण ।
प्यार से सतरंगी दिन थे
ओस पर जैसे किरण ॥1॥

थी विहसंती बूँद सी,
अपनी भी हँसती ज़िन्दगी।
कर रही अटखेलियाँ थीं-
जिन्दगी से हर ख़ुशी ॥2॥

दे रही थी प्यार पर,
हमको दिशाएँ भी सदा ।
भुलाकर कि, दिन संग-
रात चलती सर्वदा ॥3॥

सुबह बूँदे ओस की थीं,
दूब पर चमकी मगर
उड़ गये फिर स्वप्न से
किरणें हुई जब से प्रखर ॥4॥

सहती रही वह ताप,
फिर भी, सुबह की आश में।
आश और विश्वास की-
थाती संजोये पास में ॥5॥

विश्वास के आग़ाज़ ने,
पीड़ा दंश सब कुछ हर लिया।
टूटे मन के तारों में
तरंग, फिर से भर दिया ॥6॥

कल फिर सुबह आयेगी,
बूंदें जमेगी दूब पर।
यह सोचकर, हमने सजाया-
फिर से अपना, उजड़ा घर ॥7॥

"बिखराव के प्रपंच पर, वारो नहीं, अनमोल क्षण।
एकत्र करना है तुम्हें, बिखरी ज़िन्दगी के सारे कण"

खामोश बचपन

आज भी एक याद, कुरेदती है, मन को,
एक भींगा एहसास जमा हो जाता है,
आँखों से बहकर, मन के किसी कोने में।
उस जलाकृति में-
ढूँढ़ती हूँ खोया हुआ बचपन।
लौटाना चाहती हूँ, रोककर
भागते समय के पाँव।
उस, मिटते उभरते क्षणों का
गढ़ना चाहती हूँ प्रारूप।
अतीत का अवगुंठन, दृष्टिगोचर हो उठता है,
चलचित्र की तरह।
खुलता है, अतीत का अध्याय
पृष्ठ दर पृष्ठ।
स्मृति के क्षितिज पर, मूर्त्त हो उठता है-
वह प्यारा सा चुम्बन,
स्नेहिल हाथों का स्पर्श, खिलखिलाता बचपन।
टूटता है, एक झटके में, सपन,
फैलता है, बिन्दु से वृत्ताकार तक -
खालीपन का बिम्ब।
दिखता है, काल चक्र की धूरी में-
पिसता, चिखता- शैशव

पितृ हीनता के एहसास संग,
प्रलय का वह दृश्य ।
चारों ओर, अन्धकार ही अन्धकार ।
उस तिमिराकृत, अतीत के धुन्ध में,
मृत्यु से अपरिचित -निर्बोध,
छोड़ आई थी- स्नेहांश, मृत्यु की गोद में।
आज भी,
मन मकड़ी, बुनती है जाल,
जाल में फँसे हम, बेचैन, रिसता है मन,
हाय रे, खामोश बचपन ।

मन का पीर

भावनाओं के जंगल में भागते हम,
ढूंढ रहे हैं, मन का भोर।
जो भागता फिर रहा है, विहान के लिये-
जंगल के, एक छोर से दुसरे छोर॥
क्योकि ------
अभिनव, अनुपम आकांक्षाएँ, हजारों बार
मर्माहत होकर, हर क्रिया की, प्रतिक्रिया में
निरंतर प्रतिबद्ध कर शैल को,
शैल खण्ड सा, खण्डित कर गया है ॥

रिस रहा है मवाद, धाव लिये आज,
सोचती हूँ, इच्छा, आकांक्षा, विश्वास-
सभी, घाव संग, सड़ गया है
दर्प की चोट से मर्माहत हो, शायद! मर गया है ॥

ऐ ! ज़िन्दगी चल, आज शैल का सीना चीर,
निर्झणी सा, तू झर अधीर।
मेरे आँसुओं संग, बहा ले,
मेरे मन की सारी उलझन, पीड़ा, औ पीर ॥

साध

मन की साधें, तेल बन,
बाती जलाये, प्यार की।
भाव, उष्मा, तीली से,
ज्योति जले, श्रृंगार की ॥१॥

भोर की, लाली सा, रक्तिम,
माँग का, सिन्दुर है।
रवि किरण है, साथ मेरे --
फिर भी, उजाला दूर है ॥२॥

सुख उषा, आकर न, ठहरी,
मन के, देहरी दालान में।
छाया रहा, हरदम अन्धेरा---
हृदय के, मकान में ॥३॥

भाव उड़ते, रुई से हैं,
अन्तः की भाषा, मौन है ।
खाली मन के, कैनवास पर--
रंग भरता कौन है ।।४।

थरथराई, लौ दीये की,
बहने लगी, ठंढी बयार ।
मन की साधें, आँख मींचे--
ढूढ़ता है, अब भी प्यार ।।५।।

-----अब.....भी ....प्या.....र....?

कोरा कैनवास

मन के कोरे कैनवास पर, भावों के चित्र बनाती हूँ,
यादो को कूची से रंगकर, उन चित्रों को मैं सजाती हूँ।
चित्रों में जब छाते तुम, पिय ! पास तुम्हें हीं पाती हूँ,
अपने अन्तर में करके बन्द, मैं मन्द-मन्द मुस्काती हूँ।
चाहा था नदी की धार बनूँ, शीतल, मन्द, सुखद बयार बनूँ,
पर, सपने कब सच होते हैं, अपने, अपनों को रोते हैं।

शब्द, प्यार का एक भुलावा है,हर चाहत एक छलावा है
सोचा था स्वप्निल चित्रों को आकर, हाथों से अपने सजाओगे,
आँसू से भींगे पलको पर मेरे, प्यार की मुहर लगाओगे, ।
पर! सपनो के कैनवास पर, रंग नहीं भर पायी मैं,
रंग-रंगकर कर दूँ पूर्ण तुम्हें, ऐसा भी नहीं कर पायी मैं।

तुम कहो ! कौन सा करूँ जतन, तुम ही हो मेरा पागलपन,
कहो ! क्यूँ, तेरे परस को तरसती मैं, नही बदली बनके बरसती मैं।
आँखों से आँसू ढलता है, हरदम तुम हीं यादों में पलते हो,
ढुलके आँसू की बूंदों में,मुखड़ा तेरा हीं, देखूँ मैं,
अपने आँचल से पोंछ तुम्हें, अपनी आँखों को सेकूँ मैं
तुम भूल गये, तेरी नियति यह,
तेरी चाहत में ही मैं जीऊँ मरू ॥

तुम ही तुम

मधुर मिलन की, मधुरिम थाती,
कभी सहमती कभी शरमाती ।
यादों को अक्षर में बाँधकर ---
विरह मिलन की, लिखूँ मैं पाँती ।

पाँती के अक्षर में, तुम हो,
विरहन के अन्तर में, तुम हो।
बस ! तुमसे कहना, ये चाहूँ---
अन्दर बाहर, तुम ही तुम हो।।

मेरी हर सोच हर दिन, हर रात मे तुम हो।
मेरे हर झूठ, मेरे हर सच, मेरी हर बात मे तुम हो।
मेरे ख्याल, मेरी धड़कन, मेरी हर रात मे तुम हो।
मेरे तन, मेरे मन,जीवन के हर प्यास मे तुम हो।

मेरी मांग,मेरी बिंदी मे तुम। शर्मो हया से लाल रक्तिम,
गालों की लाली में तुम हो । मेरी रत्नारी आखों में तुम।
मेरे उच्छवास, मेरी सांसों में तुम। सोचते हो मैं अकेली हूँ,
यहां मैं अकेली नहीं । हर वक्त मेरे पास में तुम हो।

मोम सा जीवन

वेदना के। पाल उड़ते, ज़िन्दगी की नाव चलती,
छूकर, किनारे को चली, फिर भी किनारे को मचलती।
वेदना के महा-सिन्धु में, दुखों का भवँरजाल भारी,
डूबती, उतराती, पथ प्रशस्त करने को, जी रही है विवश नारी ।

जिसने, वेदना के जल से सींच, फूल शाखों पर खिलाये,
उसका शूल से दामन है घायल, अस्रु दृगों में झिलमिलाये।
वैसे ही जैसे रौशनी दे, मोम पिघलता, मोम सा ही जीवन सारा,
दे उपेक्षा का दंश मोम को, रोशनी करता किनारा ।

जीवन सागर के महावेग में मुश्किलों की रात भारी,
टूटती साँसों की डोर, डूब रही है तन की। नारी ।
चाँदनी का ले सहारा, धार पर चुपचाप बहती,
खो गया विश्वास जिसका, जिन्दगी से क्या वह कहती ।

स्पन्दन-हीन, विक्षिप्त हृदय ले, वह तड़प चुपचाप रही,
जी रही है। भार सह वह, जी रही, जैसे --------मही ।
वेदना का मधुप भटकता, ढूंढता सुख स्नेह सुगन्ध,
पर, उड़ते स्नेह पराग का उसने, पाया नहीं? थोड़ा भी अंश।

जिसके लिये धूप भी गीला, शाम भी गीली, दिन भी धुँधला सा,
मन पंक्षी से फिर भी कहे वह, नील गगन में उड़ता जा ।
यह विडम्बना ही तो है ।।₹।।

बेसबब् जिन्दगी

बेसबब्र ज़िन्दगी को, न? कभी करार मिला,
उम्मीदें टूट गई, प्यार को न, प्यार मिला।
बढ़ाया हाथ जो, फूलों की तरफ..........
झड़ गये, फूल सभी, हाथों को बस, ख़ार मिला।

खुशबू उनकी, जो सहेजा था, सिरहाने कभी,
उड़े सुबास, जमी वहाँ, आँखों की नमीं।
थम गई है सांस, सांसों को न, रफ़्तार मिला।
उम्मीदें टूट गई .... प्यार ! को न, प्यार मिला।

आज, दिल में अरमान भरें,
होठों पे आवाज़ नहीं
चाहूँ ! दर्द भरे गाऊँ गीत....।
ओफ्फ ! स्वर नहीं, साज नहीं ...

सावन की झड़ी

दूर तुमसे, बनके पतझड़, जी रही हूँ उदास मैं
याद दिलाये, सावन की झड़ी, पिय तुम्हारे पाश की
छुद्र काया, माया लिपटी, भूलूं कैसे नेह मैं
चाहना की, बंचना में, हो रही हूँ मैं विलय।

भर गये ताल तलैया, साजन,
भर नहीं पाया पर सूना मन,
मन में जगी एक प्यास लिये,
तड़प तरस मैं रो रो हारूँ, प्यार तुझे कई बार पुकारूँ।

सावन का, ये मधुमय कानन, सुनी कुटिया, सूना आँगन।
यहाँ पतझड़ सा मेरा जीवन,
क्यूँ है साजन कैसे सवारूँ
प्यार तुझे कई बार पुकारूँ।

शांत खड़ी में इस आँगन में, अश्रु लिये हूँ इस पलकन में।
एक एक बूँदों के ढुलकन में,
बिम्ब तुम्हारी प्रियतम पाऊँ
प्यार तुझे कई बार पुकारूँ।

चाहूँ की तेरा, पाश मिलेगा, जीवक को मधुमास मिलेगा।
पर बढ़ती ही जाती दूरी,
प्रेम में बिहवल तुझको पुकारूँ।
प्यार तुझे कई बार पुकारूँ।

क़शिश

प्यार का हर नाम उपनाम सा लगता,
नियति का हर पहलू बाम सा लगता।
प्यार का हर तथ्य आम सा लगता,
अमृत का हर प्याला जाम सा लगता।

ज़िन्दगी का हर क़शिश, पयाम सा लगता,
रिश्तों का हर नाम बदनाम सा लगता ।
अपनों से टूटा, मन बड़ा म्लान सा लगता,
जीने की चाहत में जीवन निष्प्राण सा लगता ।

प्रेम का हर शब्द, शब्दांश सा लगता
ज़िन्दगी का हर लमहा, अल्पांश सा लगता
जीने का मकसद, महज एक काम सा लगता
प्यार का हर अर्थ, बड़ा बेदाम सा लगता।

मौत की कल्पना में बड़ा आराम सा लगता,
अन्ततः जिन्दगी का अंत ही, मुझे अंजाम सा लगता।

सुखद सौंध

करुण व्यथा, उसके जीवन का,
लिखने को, मन क्यों ललक गया।
घट भरा था, प्यार के पानी से,
ना जाने कैसे, छलक गया ।

नैराश्य भरे, उस चेहरे पर
झंझा के, इतने कांटे हैं।
उन कांटों से, बेधिल, व्यथित-
आंखों का पानी, ढलक गया ।

शैशव की कली, मुरझाई रही,
यौवन को न, उसके उन्माद मिला।
उन्माद बस, उसके जीवन पर-
ठहरे बादल सा बरस गया।

उस पगली ने, अपने आंगन में,
शैशव सुगंध बिखेरा था ।
सुबह - सबेरे की मत पूछो,
शाम भी उसका सवेरा था।
तुतलाहट के बीच जिन्दगी,
उसका जैसे गान बन गया !

माया की, काया मत पूछो
पलटी तो, कुछ ऐसे पलटी,
मुस्कान भरे उस सीने पर शैशव,
शब्दों करा तीर बन गया।

आज उसके, मुख मंजुल पर -
वेदना के, असंख्य दाग हैं उभरे
झेल रही आघात का दंश
चारों ओर कांटें है बिखरे।
उसके मन का, सुखद सौंध
बालू की, भित्ति सा, ढह गया।

माँ का दर्द

शुष्क कंठ, आतुर हृदय में,
है छोटी सी अभिलाषा l
देकर प्यार पाहुन सा मुझको -
कर दो, शांत पिपासा।

रुद्ध प्राण, सहमा हृदय है,
फड़फड़ाते प्राण विह्वल।
क्यूँ नहीं तुम थाम लेते -
स्नेह बिन सूना ये आंचल।

कर अनादर, प्रेम का,
क्षत विक्षत, अन्तर कर रहे हो।
क्यों मेरे स्वपनिल दृग में-
अश्रुजल तुम भर रहे हो।

क्या बताऊँ, सिसक सिसक कर
भर उठा अवसाद से मन।
बिन तुम्हारे स्नेह के
संतप्त, दग्ध और क्लांत जीवन ।

स्नेह भरा यह मातृ मन,
कसक कचक पीड़ा है ढोता।
मेरी मूक व्यथा का बोलो
क्यों तुमको एहसास न होता।

शैल

कब तक

ज़िन्दगी को, उदास लमहों में जी रही हूँ
खुशियों के बीच बैठी, दर्द को पी रही हूँ।
मेरी हर चाहत को, रुसवाइयाँ मिली,
हर बढ़ते कदम को, खाइयाँ मिली।

सुखों के बीच बैठी, सुख को तरस रही हूँ,
नदी के बीच बैठी, पानी को तड़प रही है।
हर लड़ाई, जीत कर भी हार जाती हूँ,
बैठी किनारे पर, नहीं पार जाती हूँ।

नाव है मांझी है, सामने पतवार पड़ा है,
मन का अहं, द्वंदों के बीच अड़ा है।
सोंचती हूँ जिन्दगी ने, क्या दिया अब तक
हार कर जीती रहूंगी, मैं कहो? कब तक?

पीड़ा संग मनुहार

मन की साधें तेल बन, बाती जलाये प्यार की
भाव उष्मा तीली से, ज्योति जले श्रृंगार की

प्रणय की पीड़ा अंतस में, क्षणिक क्षण मनुहार की
आज भी है याद मुझको, झंकृत वीणा के तार सी

भाव खिलते फूल से थे, शब्द गंध मिश्रित सुधा
आज बिखरी पत्तियों से, धुल भरती है क्षुधा

गर्द और गुब्बार बन कर, स्नेह सारे उड़ रहे
म्लान मन की मौन घटाएं, बादलों संग जुड़ रहे

अनकहे से शब्द सारे, व्योम तारों से मिले
लेकर निशा से रश्मिकण, नयन में आँसूं खिले

टूटते तारों सा आँसूं, निस्तेज हो दिल पर गिरा
परस पीड़ा एहसास का, उपहार धरणी सा मिला

मर्म की शाख़ों पर देखा, शूल का श्रृंगार था
फूल तो झड़ते गए, शूलों पर बहार था

फूल सुन्दर शाख़ पर हैं, ज़िन्दगी बस चार दिन
मैं सहूंगी शूल पीड़ा, शाख़ संग हज़ार दिन

नम आँखें

मौत के साये में हम है, ज़िन्दगी ख़फ़ा - ख़फ़ा ।
मौत अब है हमसफर, ज़िन्दगी है बेवफ़ा

कौन कहता मौत लिखता, बैठा विधाता है वहां,
सच अगर होता यही, मिटता नही सुन्दर जहाँ |

कर रहा जब आदमी ही, आदमी के मौत का सौदा यहाँ।
किस तरह कैसे बचे फिर, आदमियत के निशाँ

है कहाँ अब आदमियत, हैवानियत का दौड़ है ।
इन्सानियत के लिए यहाँ, दूजा नहीं कोई ठौर है ।।

देश धर्म त्याग बोलो, फिर कहाँ से सोंचे लोग।
जब तलक मिटता नहीं, आतंक के महामारी का रोग

प्रेम चंदन हाथ ले, ढूंढें कहाँ इन्सान हम ।
बद से बदत्तर आदमी, देख हुई आँखें हैं नम

टूटती साँस

सुना सकोगे, तुम हे मानस, मेरे जीवन का इतिहास।
लिखा हुआ है जिन पन्नों पर, मुझ पगली का दर्द संताप।

हे रे जीवन, हे रे तन मन, दुख विरहा में तड़पा आनन।
कह दे तू, कैसे मैं जीऊँ, ले विपदा का अक्षय धन।

कहते हो तुम, फिर भी जीओ, निराशा में लेकर विश्वास।
दूढ़ लो स्वयं में, नया विहान, भुलाकर अन्तर का अवसाद।

छलकर छलनी करते हो क्यूँ, क्यों तोड़ते हो विश्वास।
हे धरणि, अब तुममें विलय को, टूट रही है एक-एक साँस।

तुच्छ जीवन

जब दर्द हृदय को छूता है
तब अश्रु गीत बन जाता है
रीता बादल भी धरणी से
कुछ और नहीं कह पाता है।

जीवन के नभ पर दर्द घटा,
बन बन कर जब भी छाता है।
आँसू की वर्षा होती है -
और तड़प गीत बन जाता है।

तड़प का गरल, सुधा बनकर
कभी जीवन नहीं दे पाता है।
मर-मर कर जिन्दा रहता वो -
जीकर जीवन पछताता है।

विधि के हाथों, मारा मानव
बस अन्तः अपना तड़पाता है।
बुझता दीया, रोशनी दे कैसे-
जलते बुझते, बुझ जाता है।

सहता है सारी पीड़ा वह,
डाली से टूटे पत्तों सा।
फिर पत्तों सा सड़कर-गलकर-
वहीं मिट्टी में मिल जाता है।

दीपशिखा (गीत)

नारी को अधिकार मिला पर,
उड़ने को, आकाश नहीं।
बंधन में, जकड़ी नारी को,
पंख मिला परवाज़ नहीं।

किसे पता है, किस सीने में
कैसा दर्द छुपा है।
उपर हंसी की, धूप खिली है
भीतर गम का, भरा घड़ा है।

धूप न फैली, मन जीने पर
आया नहीं सुख भोर कभी,
प्यार के छिटपुट बूँदों से-
जो, अंतर्मन को भिंगा न सकी।

मन का कोरा, कागज खाली
काला है, कालिख पुता
घर आँगन रौशन करने को
जलती है बन दीपशिखा।

पास अंधेरा मिटा नहीं
अन्तर उष्मा को सहती रही।
बाती सा जलकर ख़ाक हुई,
बन कालिख की लम्बी लकीर।

मैली शाम सी, मन का कागज़,
आँसू से ही रोज धुला।
गीला कागज़, फटा कुछ ऐसे
जोड़ा अक्षर ना शब्द मिला।

अन्तः में सारे गीत पड़े हैं
बाहर कोई, साज़ नहीं।
कागज़ के बेरंग पन्नों पर

गीत भरे आवाज़ नहीं।

नारी मन का विस्तृत आँगन,
प्यार बिना, बनता है कानन
जीती है वह तड़प-तड़प कर,
धुंधला देख आशा का चानन ।

धूप-छाँही खेल

तुम
तुम्हारा साथ,
बैठने बिठाने का यह उपक्रम
लगता है,
शिखरों पर, धूप छाँही
खेल है दुपहरी का ।एक उलाहना है,
नजरों में -
कसमसाहट है पाने की,
कामना हैलुक छिप जाने सा,
उस दिवा-निशा के -
खेल की तरह
जो बीत रहा है -
मेरे - तुम्हारे बीच
कभी खुलकर
कभी धीरे से -
आँखें मीच नियति के रेल-पेल
की तरह ।

हतभागिनी (विधवा)

हाँ? मैंने देखा है-
खुशियों के नील नभ में
विचरण करती उस हतभागिनी के-
भोर की लाली सा, रक्ताभ चेहरे को।

देखा है -
घवल ललाट पर लालिमा युक्त,
सूर्य सा गोल टीका।
और सिन्दुरी लम्बी, सीधी माँग ।
जो आज सूनी पगडण्डी सा
सफेद बालों के, जंगल से ढका है।

देखा है-
जन शून्य, पगडण्डी पर उगे काँटो से-
दूर होते उन रिश्तों को,
जो कभी, उस पगडण्डी को-
गन्तव्य मान, चला करते थे ।
रास्ता बदल, दूर खड़े हैं मुँह फेर।

देखा है-
वेदना में डूबा विलास,
शीतल समीर को बनते बवंडर,
नियति का छल
झंझाओ का मंजर।
जीवन को ज्वालामुखी सा फटते-
लावों की गर्मी और उस बेबस की हठधर्मी।

देखा है-
अतीत की स्मृति में व्यथित
उस विधवा की सुनी आँखे।
दो बुन्द, आँसूओं का तर्पण
और पिय वियोग में तड़पता-
तृषित उसका व्यथित मन l

सहती स्मृति का दंशदाह
होठों पर वेदना विन्यास
सूनी आँखों में स्नेह प्यास
यादों में बसा विगत इतिहास
हाय! विधवा जीवन,
एक जिन्दा लाश।

आँखें

दोराहे पर खड़ी, शिला-सी,
मैं जड़वत, स्थिर कठोर।
कहकर अपनी सारी पीड़ा,
कहो? मचा दूँ, कैसे शोर!

भींगा मन का, कोना-कोना,
शह को कैसे, मात कहूँ?
रंग सिन्दूरी, सुनी देह को
पतझड़ या, मधुमास कहूँ।

जिन आँखो से मिला है सबकुछ,
उन आँखों की बात कहूँ।
कह दूँ, अपनी सारी पीड़ा,
या पीड़ा, चुपचाप सहूँ।

चुभता है, अन्तस में मेरे,
तीर चुभा, जो, आँखों से।
कभी प्यार के, रंग सुनहरे,
देखे थे, जिन आँखो से।

देखी थी, खामोश शरारत,
अपनी इबादत आँखो में।
एक छोटा-सा ताजमहल भी।
कभी दिखा जिन आँखों में

उन आँखों में जहाँ प्यार का
एक दिन देखा था जो कभी ।
बरसा है वह स्नेह गरल-सा,
अन्तस के, भू पर, यहाँ अभी।

"प्रतीक्षा"

मेरे प्राणों के, प्रांगण में,
सपनों का, सूना भूला है।
नीरव भावों में, मन आनन,
अब तक भटका और झूला है।

किन्तु, विजन में, सौंध नया मैं,
पल पल औ, प्रतिपल रचती हूँ।
भावों की, दुनिया में खोकर
निलय प्यार के मैं रचती हूँ।

किस पावस में, मैं गाऊंगी
प्रागंण के, झूले पर छाकर।
कब बांधेगा, पाश नया वह -
मेरे व्याकुल, उर को आकर

बाँध सके जो मन को आकर,
ऐसा सावन कभी न आया।
आशा की कोई, किरण नहीं है,
कब तक करे, प्रतीक्षा काया ?

मैं देश

विडम्बना

क्यों, विरान हो रही धरती,
क्यों, विराने हो रहे लोग,
मौसम तो नहीं बदला,
क्यों बदल रहे हैं लोग ॥१॥

हैं फूल यहाँ, खिलते,
गुलशन भी नहीं उजड़ा ।
क्यों उजड़ रही बस्ती,
पतझड़ सा नज़ारा है ॥२॥

यहाँ बहती, ममता है,
नदियाँ भी नहीं सूखी ।
फिर प्यासे क्यों हैं लोग,
ममता बेसहारा है ॥३॥

जब तप्त नहीं धरती
है ठंढ़ी हवा बहती।
फिर, जलते क्यों हैं लोग,
तपता जग सारा है ॥४॥

जब उठा नहीं तूफान,
आँधी भी नहीं आई।
फिर फैला क्यों आतंक,
टूटा घर सारा है ॥५॥

जब आग यहाँ, दावानल,
बड़वानल जठरानल है।
फिर किसे जलाने को-
ज़मीं पे, आतंक उतारा है।

दामन में लगाकर आग,
हम किसके लिये रोते,
अपने लिये, जब हमने ही
अपनों को मारा है ॥७॥

"विरानी है क्यों फैली? क्यों आज यहाँ ऐसा।
यह सोचकर कल अपना, चलो बढ़कर, सुधारे हम"

मातृ भूमि का दर्द

संवैधानिक अधिकार खोखले,
कुव्यवस्था की सर्वत्र है लीला।
लाचारी से फटा है,आँचल,
आँसू से दामन है, गीला।
सच्चाई रोती बैठ यहाँ। ,
जनता बेचारी जाये कहाँ ।।
न्यायी का न्याय, जिसे छलता है,
यहाँ सच लंगड़ाकर चलता है
यहाँ न्याय नीति सब बदला है,
कुर्सी का पानी गंदला है।
है कहाँ, यहाँ कुर्सी पर सच,
जा जिसे सुनायें, अपना दर्द,
है कोई जो न्याय दिलायेगा,
आगे बढ़ जन पे, छायेगा......
जो---
चतुर्दिक फैला दे मधुमास,
जगा दे, जनता में विश्वास।
बामन के डग को, रोके जो--
द्रोही पापी को टोके, जो ।
फिर जागेगा जनता मे विश्वास,
जागेगें फिर, भारत के भाग्य ।
खेलेगें भारतवासी, फाग
आज़ादी के हम गायेगें राग।

ओहदा

ओहदा और ओहदे ने,
ला दिया, बिखराव क्षण,
किस तरह, ममता समेटे-
क्षुब्ध प्यासा, मातृमन ॥१॥

कहाँ गई वह, संस्कृति,
कहाँ गया, परिवेश वह।
जी रहे थे, सब जहाँ,
अपने, अपनों के बीच रह ॥२॥

भूल गया परिवेश संतति
जहाँ कभी था पला बढ़ा।
आँगन, आँचल मिट्टी छोड़ी,
ओहदे का चश्मा, आँख-चढ़ा ॥३॥

ममता टूटी खाट पे बैठी,
वंश परम्परा की भित्ति ढही।
घर में सूनेपन का अन्धेरा,
संयुक्त परिवार की प्रथा गई ॥४॥

तड़प रहे माँ-बाप दरस को,
सर पर रखने हाथ।
पर लेने आशीष न आता,
संतति पीढ़ी, उनके पास ॥५॥

सूने घर में शून्यता का,
घुप्प अंधेरा, घोर घना।
किस तरह ममता समेटे,
क्षत-विक्षत है, बागवाँ ॥६॥

चला गया संतति जिसका,
दूर देश विदेश में।
पलने लगी, संतति भी-
उसकी, बस उसी परिवेश में ॥।७॥

ममता को मिली है पूर्णाहुति,
आधुनिकता के दौड़ में।
दारूण दुःख, चीत्कार भरा है,
माँ के आँचल के छोर में ॥।८॥

लाशों के ढेर पर

क्यों अनीति अत्याचार का चतुर्दिक फैला राज है
आतंक और भय में यहाँ, जी रहा समाज है।
खो गये हैं जिसमे, सारे शांति के साज़ है
लाशों के ढेर पर, सपने और साध हैं
क्या यही आज़ादी है और हम आज़ाद हैं ।

नर यहाँ नराधम सा, नरसंहार करता जा रहा
धर्म यहां अधर्म की, बेदी पर चढ़ता जा रहा
समस्याओं की सुरसा मुँह बाए विकराल है।
समस्याओं से जकड़ा, जन कर रहा फ़रियाद है
क्या यही आज़ादी है, और हम आज़ाद हैं ।

कब, कहाँ, क्या हो, ज़िंदगियाँ है धार पर
स्वतन्त्रता क्यों मर मर गई है, मनुज व्यवहार पर
जाति, वर्ग, भेद में लिप्त हर इन्सान है
फिर कहो कैसे कहे, कि एकता आबाद है
लाशों की ढेर पर, सपने और साध है

नारीत्व की रक्षा यहां, संस्कृति का आधार है -
फिर क्यों जन कर रहा, अस्मत का व्यापार है
बेबस बच्चियों की आबरू भी, यहाँ बर्बाद है
क्या यही आज़ादी है और हम आज़ाद हैं।

जागरण का मंत्र तो, लोकतन्त्र का आधार है
फिर भी जन कर रहा, मौत की व्यापार है
जब न्याय नीति ही, अनीति में बदल रहा
समझो आज़ादी का सूरज, शर्म से है ढल रहा
एकता के मंत्र भूले आज़ादी बस याद है
क्या यही आज़ादी है और हम आज़ाद हैं।

स्वतंत्र होकर भी क्यों, विभ्रांत मानव हो गए
जाग उठे थे कल जो सारे, आज कैसे सो गए
भूल गए राष्ट्रीयता के तथ्य, अहम् ही बस याद है
क्या यही सपनो का भारत? तिरंगा कर रहा फ़रियाद है
लाशों के ढेर पर सपने और साध है

आदमी

विज्ञान का युग है, 21वीं सदी की लहर है,
हम ऊँचे है, हमारी ऊँचाई ही,
मानव और मानवता पर क़हर है।
वर्तमान में कुछ लोग भ्रष्ट है,
कुछ बनने को मजबूर हैं।
मिला जुला कर सत्य, धर्म, निष्ठा से,
मीलों कोसों दूर हैं ॥

आज स्वार्थ लिप्त आदमी, बन बैठा शैतान है
ढूढ़ें कहाँ हम आदमी, जिसमें छिपा इन्सान है।
इसलिये--
आज आदमी में, आदमी को, ढूंढता है आदमी ,
क्योंकि--
पशु से भी बदतर , हो गया है आदमी।।
सृष्टि भी हैरान है, क्यों उसने , बनाया आदमी ,
राह अपनी भूल, किधर जा रहा है आदमी।।

क्यों साधु से शैतान, बनता जा रहा है आदमी,
क्यों नृशंस हत्या, बलात, पाप, करता जा रहा है आदमी॥
आदमी के जुनून से भयातुर, हो उठा है आदमी,
शर्म से झुका है आसमां, लहूलूहान हो रही ज़मीं ॥
हो आदमी को, आदमी का भय अगर,
किस तरह आबाद होगा, यह नगर।।
जब, खून पीकर भेड़िये सा, हो गया है आदमी
फिर कहो, कैसे कहें हम, आदमी को आदमी।।
जब आदमी, आदमी होकर भी,
आदमी न रहा,
तो अब, आदमी को आदमी कहना,
लाज़मीं न रहा ॥

पश्चाताप

गलती हुई चलो हम मान लें..
इन्सान हैं, इन्सान को पहचान लें
हैवानियत की आग जो हमसे लगी,
उसे बुझाने की चलो, हम ठान लें।
दुश्मनी की धार न, अब पैनी करो,
इंसां हैं, इन्सानियत का दम भरो
आंसुओं का बंध गया है, जो शमा
रोकने का हो सके, तो यत्न करो।
मासूमों के कराह से, नहीं हम बदगुमां
दर्द से भीगा हुआ है आसमाँ,
रक्त-रंजित, कराहती है धरा,
चलो निकाले शांति के कारवाँ।
रक्षा में इंसानियत के, ना करो कमी
एकता और प्रेम से सींचो ज़मीं
दर्द की दुनिया को मिटाने को चलो
पोंछने, अपनों के आंखों की नमी।
सोचने का, समय है हित-अहित
देश की अस्मिता, न होवे समित,
चलो बचालें, गुलिस्ताँ के बागवाँ
आज़ादी का अर्थ न होवे दमित।

{ वर्तमान युगीन परिपेक्ष में, सबसे पहले सोचना है

- न यहाँ कोई हिन्दु है, न मुसलमान है

- हर कोई इस देश की संतान है।

अत:

अबतक हमने जो गलतियाँ की है, उसका पश्चाताप ज़रूरी है।

भाइयों के खून से रंगे, जो हाथ हैं
अपनों के लिए हृदय में जो घात है

इन्सानियत के लिए, चलो मिटा दें हर निशाँ,

एहसास तो मानव हृदय की बात है।}

उड़ान

अति व्यस्त मानवों की
उच्चाकाँक्षा ने-
भरी है ऊँची उड़ान !
यंत्र युग के कोलाहल में
दब गया है -
मधुर सम्बन्धों की लय-तान ।
सूखा है, हृदय का प्रेम सरोवर
प्रेम का अल्पांश भी,
नहीं जहाँ रत्तिभर ।
बदले है लोग, बदली है नजर।
अहम् के अंधेरे में, दिखता नहीं है पर ।
स्वार्थ पंक में धंस, फैला, भ्रष्टाचार का रोग-
कर रहे हैं कलुषित पाप, भोग वृद्धि में लिप्त लोग ।
भूलाकर आदर्श की दिव्य प्रभा
दिक्भ्रान्त् हो, फैला रहे है-
मानवीय धरातल पर -
मृत्यु का शोक संताप ।
आगे बढ़ने की यह कैसी होड़ ?
अर्थ लोलुपता की भीड़ में, खो गई है मानवता ।
विछिन्न हो गए हृदय वीणा के तार ।
देख अन्याय, लूट, भ्रष्टाचार,
सहम गया है, बसुधैव कुटुम्बकम् का
भावात्मक शब्द सार।

नदी और बाढ़

इंसान की ज़िन्दगी
नदी बाढ़ का पर्याय है
एक शीतल जल की धार
दूजा विभिषिका - आधार ।।।

नदी का शांत बहता नीर
बाढ़ बौराता अधीर
फैलता उपलाता उपद्रव मचाता,
गौरव बान्ध तोड़, डूबोता डराता।

स्वार्थ निमित्त करता मनमानी
मानव भी बाढ़ सा धृष्ठ अज्ञानी
क्यूँ मूल को शूल चुभोता पापी
बना पाप हथियार---

पापी बाढ़ सा, आतंक प्लावन कर
करता ध्वस्त जग सारा
पर प्लावन शक्ति अभिमानी -
जीता नहीं, बस हारा l

फैलाकर आतंक का कीचड़,
सड़ता गलता, वहीं ज़मीन पर,
देखो कौन सुख पाया उसने -
होकर नदी, सीमा से बाहर l

काल के गाल समाता पापी ,
पहन पाप की अँगिया
प्रखर तेज है, सच का इतना
देता, मिटा बाढ़ की भंगियाl

देखो, आज भी सौम्य शांत.
स्थिर- इंसान की नदी खड़ी है।
वियावानो में हैवानों की लाशें,
सूखी, सड़ी, पड़ी हैं l

चीथड़े चीथड़ों में बटी है लाशें,
कुत्ते उड़ा रहे है भोज
जन-जन सारे थूक रहे -
था आतंकी, यह सोंच l

ऐ मूढ़ मानव भुला क्यों ? बाढ़ सा,
मूल नदी की धार
नहीं, मिटा सकोगे इंसानियत का सच
खुद, मिटोगे सौ-सौ बार l

ऐ मानव बस इतना ही जानो-
इंसानियत है इंसान का मूल
छोड़ शाख का सौरभ क्यों-
मूल को चुभो रहे हो शूल l

कितनी बार ध्वस्त किया हैवानों ने -
धरा का रूप शृंगार
पर इंसानियत के दम पर -
धरती, सँवरती रही है बारम्बार ।

प्रश्न चिह्न

युग और इंसान के बदलाव का स्वरुप प्रश्न चिह्न बन झक झोड़ता है मुझे
,आखिर क्यों?

ज़िन्दगी को ज़िन्दगी पर, होते देख भारी
लोग करते है अस्मत, ईमान, धर्म बेचने का फ़तवा जारी ।

क्यों हैवानियत को मिलता सबेरा, इंसानियत की रात होती है ,
धर्म , ईमान, सच, की तो सिर्फ यहाँ बात होती है ।

क्यों नेकी कर के , नेक यहां भोगता, अंजाम है ।
करके बदी , बद यहां पीता ख़ुशी के जाम है ।

क्यों बनते हैं छल बल से ही , लोग यहां अज़ीम।
ईमान को है अश्क़ मिलता ,बनते है वे ही यतीम।

क्यों अहले वतन भी, बुत परस्ती के गीत गाता है ।
धर्म के लिए , इंसा को इंसा नहीं रास आता है।

धन की चकाचौंध में लोग, अपनों का अरमान बेचते हैं ।
अपनों के जलते अलाव पर, अपना हाथ सेकते हैं।

युग कैसा आ गया , विश्वास को घात मिलता है
जिंदगी है एक जुआ, जिसे शह नहीं मात मिलता है ।

"अरे मत करो गुल, जलने दो, इंसानियत रौशन चराग़ ।
शांति के जल से बुझा दो, हैवानियत की जलती आग ।"

न्याय (मुक्ति की गुहार)

जिस नारी की महिमा से रहा भारत महान् ।
आज उसी नारी को नहीं मिलता कहीं पर परित्राण ll

द्रष्टव्य है- विवेकी डाक्टर जो
माने जाते धरती के भगवान,

रोगी बालिका को बनाते हैं हवस का सामान l
रिश्ता ने भी मुँह काला किया है

बनकर हैवान, फिर कहां बचा रहा
इस धरती पर इंसान ?

आज रक्षक ही भक्षक बने दिखते,
चहुँ ओर हैं,
फिर कैसे कहाँ हम विवश नारियों का
ठौर है?

एक लूटी नारी को ही दोषी ठहराता
है समाज,

कहाँ हवस के पुतलों की चिथड़े उड़ाता
है वो आज!

अंधे कानून तले, लूट रही है
आज भी नारी, रोज़ सरे-आम

क्यों नहीं कानून मृत्यु दण्ड देता वहसी
को खुले आम 1

विचार करने को समक्ष
आपके अपराध कथा सारी है 1

मात्र कुछ वर्षों की जेल ही नही,
इसकी युक्ति है,
वे तो छूट जाएंगे पर दलदल में फंसी
नारी को कहाँ मुक्ति है?

मृत्यु-दण्ड ही एक अमोघ अस्त्र
है जो नारी को बचाएगा

सज़ा का कठोर दंश ही
नारी को मुक्ति दिलाएगा।

बाल-श्रमिक

उनकी सुनी आँखों में है,
सिर्फ कोरी अभिलाषा।
चमक उन आँखों को देकर -
कर दो शांत पिपासा।

मुक्त इन्हें बन्धन से कर दो,
अर्थ स्वतंत्रता का जान।
जीवन की आशाओं का हक -
दो उनको भी पाने।

देश हमारा जगमग दीपक
बच्चे हैं दीपक की बाती',
लाखो गावों शहरों के -
बच्चे ही हैं, देश की धाती।

बच्चों की खुशहाली से ही
होगा देश निहाल।
शिक्षा और स्वतंत्रता का-
हक़ देकर, कर दो इन्हें खुशहाल।

मैं समाज

गाँव की धूल

गाँव की मिट्टी बड़ी निराली, रूप जो उसका देखा।
हरियाली की बिछी है चादर, धरा का रूप अनोखा।

गेहूँ की पकती बाली का, पहने चुनरी धानी
सजकर बैठी धरा दुल्हन सी, प्यार की कहे कहानी।

गुंजित भँवरों के छुअन से, कलियाँ बन गईं फूल।
बैठी दुल्हन सी धरा के गले, लगे रही वो झूल ।

आमों की डाली पर बोले कोयल मीठी बोल।
जहाँ क्षितिज का ओढ़े घूंघट, धरती दिखती गोल।

पीली सरसों के फूल जहाँ , सगुन पराग बिखराये।
जिसे देख, वृक्षों का पत्ता भी, नाचे झूमे गाये।

बहती नदी लगती हैं जैसे, सीधी मांग दुल्हन की।
सूरज की लाली से भरती, प्रीत अपने साजन की।

जहाँ आशीष के फूल बिखेर, देवता अन्न, धन, जल बरसाये,
गाँव की धरती बड़ी निराली, सबके मन को भाये।

जहाँ आमों के मंजर, बरसाते खुशियों के हैं फूल,
सौरम सुगंध बिखेरने वाली बंदित गाँव की धूल |

दो छक्के

दो रक्षक पर आश थी, वह भी बना कठोर
भ्रष्ट हुए डॉक्टर पुलिस, जाए हम किस ओर
भ्रष्ट हुए सब लोग, राष्ट्र पर विपदा भारी
गटक रहा है पाप, सत्य की निष्ठासारी
निष्ठा बना नृशंस, आज लूटती है नारी
किससे करें गुहार, सुनेगा कौन हमारी।
कानून न्याय अंधा बना, नेता सब बेईमान
चंद पैसों की ख़ातिर, वे तो बेचते है ईमान
जब बिकता है ईमान, न्याय की बात कहां है
सत्य पर झूठ का पर्दा, पुण्य पर पाप यहाँ है
देख अधर्म की जीत, धर्म आज भीरु बना है।
लगता है रक्षा के धनुष पर, राक्षसी तीर तना है।

कुछ थोड़ा सा

कुछ दो
बहुत कुछ संभल जायेगा
पीछे पड़ा जो, आगे निकल जायेगा।
कुछ बड़ा महीन है, तुम्हारे अधीन है।
कुछ का मूल्य नहीं, दूसरा उसके तुल्य नहीं।
कुछ अल्प है, कुछ ही विकल्प है
कुछ ही कुछ करता है, खाली को भरता है।
छोटा सा दान है, पर बड़ा महान है।
थोड़ा सा कुछ
कुछ ही तो है, बहुत कुछ।
बस कुछ चाहिए, निखरने के लिए,
कुछ चाहिए उबरने के लिए।
जीवन कुछ बिना अधूरा है, कुछ से ही पूरा है।
अपना कुछ दो, सत्य को
चढ़ने को सीढ़ी, भरने को पेट
छोटे से कुछ की, कथा विशेष।
कुछ, बहुत कुछ है?
कुछ, सब कुछ है।
तुम्हारे पास का कुछ, अंधेरा मिटायेगा।
मृत-प्राय सा जीवन, जीवन्त हो जायेगा।

शख़्सियत

मेहनत से जो पत्थर को है पानी बनाता
बदले में जिंदगी से वह कुछ नहीं पाता।

चाकरी करते हैं वे, देहरी दालान मे
बिताते है अपनी रात, खेत खलिहान मे

उगाते है दाने खेतों में, पसीने से सींच कर
जीते है वह ज़िन्दगी, उम्र भर घसीट कर

फिरते हैं बरसात में ले,नंगी सी काया
पास जिनके धूप में, बस हाथ की छाया

अलाव की गर्मी में , जो शीतलहरी है सहता
पीकर घूट दर्द का, जो चुप सदा रहता।

जिंदगी उनकी ,कभी ऊसर, कभी बंजर,
भूख चूभाता जिसे, बेखौफ़ हो ख़ंजर ।

देखा नहीं जिसने कभी, सुख का समुंदर
देखा तो देखा बस, अभाव और मौत का मंज़र।

झाँक कर देखो ज़रा, उस शख्स के अंदर
भरता है सबके भूख को, जो भूख से लड़कर

जिस शख़्स की शख़्सियत है, देश का गौरव
मिलता नहीं उन्हें कभी, स्नेह का सौरव

उस शख़्स की शख़्सियत को, गौर से देखो।
स्नेह आदर प्रेम दो, दूर मत फेंको,

क्योंकि गरीबों की ये बस्ती है,
गरीबी उनपे भारी है

जी तोड़ मेहनत में ही
बीतती उनकी उम्र सारी है॥

दीपावली

जीत और जागरण की ज्योत लेकर,
आई है, दीपावली
दुआ है दीये की लौ ---
तुम्हारे, अन्तस् तक पहुँच कर,
तुम्हारे, मन में, रौशनी भर दे।
नैतिकता, धर्म, ईमान,
जो गुम है अन्धेरे में,
चीरकर, अन्धेरे को, शांति का ---
नया विहान बस, भर दे।
सत्य, अहिंसा औ मानवता,
जो, खो गया है, हिंसा के साये में--
दीये की रौशनी में नहाकर आज,
सच की पहचान तू कर ले।
अपने को जलाकर,
जग को रौशनी देता है, यह दीया।
इस तथ्य को, मन प्राण में भर,
सर्वस्व के लिये जलकर --------–-
देश का कल्याण, तू कर दे।

दीये की रौशनी से खुद में, उजाला तू भर,
दीपावली के अर्थ को तू , यूँ व्यर्थ न कर।

पाषाण

फल विहीन, वो वृक्ष खड़ा था-
होकर बड़ा उदास,
पास नहीं था, उसके कोई -
नहीं' पास उल्लास।
बहुत दिनों तक, तड़पा तरसा-
हुई तपस्या पूरी, झूम उठा था-
फलों से लदकर, रही न इच्छा अधुरी।
सभी पास थे, उनके अब तो
जो थे उनसे दूर
फलों से लदकर रहने लगा था,
वह भी मद में चूर।
भूल गया वह, जग की रीति-
फल ही देगा चोट,
जिसके लिए झुका वह इतना,
अपना जिसको सोच।
कुछ तो दूर हुए डाली से, करके उसे निराश -
देता रहा चोट वह अपना,
जो था उसके पास।
छलनी हुआ हर अंग वृक्ष का,
डाली लहूलुहान
समझ सका नहीं दर्द, फल उसका,

निकला वह "पाषाण"
जीवन के खेल भी, अजब निराले-
साधक को मिलता, नहीं विराम
हर साधक की साधना को,
मिलता है एकान्त |

रिश्तों की क़ैद में

नियति ने, जीवन पन्नों पर
रिश्तों की कथा, कुछ लिखी विशेष.
सदा बदलता रहता रिश्ता,
रिश्तों के है, रूप अनेक।

कुछ बनते हैं, जन्म से रिश्ते,
कुछ जगत की भंगिया देख।
बहुरुपिया होता है रिश्ता,
समय की भित्ति पर अभिलेख।

कथासार, जीवन का जल थल
रिश्तों की कथा निराली है
कभी भरा घट, प्यार का मिलता
कभी मिलता घट खाली है।

रिश्तों की यह माया नगरी,
हृदय भाव का सागर है।
कभी विरह की नाव डूबती,
कभी प्रेम की, गागर है।

घृणा, प्रेम और दर्द ही,
संसार है इसका।
ढोना कठिन बड़ा
वज़नी भार है इसका

फिर भी तलाशते है,
ज़िन्दगी की राह पर हम रिश्ते
टूटकर भी बनाते नहीं
हम कुछ कम रिश्ते।

आजीवन, जन्म से मरण तक
हम रिश्तों से बंधे होते हैं
रिश्तों से टूटकर भी-
हम, रिश्तें ही ढोते हैं।

अतः जीना है, हर हाल में,
गूंथ रिश्तों की लड़ी।
बिरह की, फाँसी मिले,
या मिले प्रेम की हथकड़ी ।
भाग्य करता फैसला,
संयोग, की चलती घड़ी।
रिश्तों के क़ैद में ही
फड़फड़ाती ज़िन्दग़ी ।

भूख

सृष्टिकर्ता ने बड़े सूझ बूझ से
भूख को था जग में लाया
भूख की भंगिया में उसने-
जीवन मृत्यु का सच समाया
किन्तु उस निरंकुस भूख ने
धृष्ट हो बदला आज स्वरुप
चिर विकास की सीमा लांग
जीवन जगत में भर दिया भूख
भूख का सीधा नहीं
सर्पिल बना है रास्ता
लुटता है, भूख को दे
भूख का ही वास्ता
आज ऐश्वर्य भूख, कामना भूख
अहंग भूख, वासना भूख
गरीबी भूख, स्वार्थ का भूख
भूख ही भूख
फैला चारो ओर भूख।
भूख ने ही जग को जीता
भूख से ही जग है हारा
पाप करता घोर तांडव
भूख का ही खेल सारा
भूख ही विकास का गौरव
भूख ही संहार है

भूख के ही चक्र में
आज सिमटा हुआ संसार है
भूख लोलुप, भूख विद्रूप
भूख मकड़जाल है
क्या होगा इस जगत का
भूख जहाँ विकराल है ।

“भूख को जो काट दो, संतोष की तलवार से
सृष्टि फिर जीवंत हो, झूमे धरा फिर प्यार से “

मृगतृष्णा

वह बूढ़ा
पीड़ा सँग जीये जा रहा है।
उठाये कांधे पर, अपनी ही लाश ।
प्रयास, पुरजोर है,
अंतहीन संभवनाओ के बीच
सूख की खोज का,
सूनी राह, सुनी देह,
नहीं कोई बात, खत्म होगी रात,।
कल्पनाओं में जीता है।
उठाने को मजबूर, डगमगाते पांव भारी।
छाँव नहीं, छाया नहीं,
विचलित मन ,रिसता है घाव
मीलों मील चलना है,
मंजिल है दूर कहीं।
टिसता है पोरपोर, नहीं है तन में ज़ोर,
दूरी कम करने का।
थक हार बैठता है, दूर-दूर देखता है।
दूर नज़र आती है,सड़ी गली एक लाश।
बढ़ता है पास,
नियति का परिहास, देख अपनी लाश
टूटती है सांस l

जेठ की दुपहरिया

जेठ की दुपहरिया है, नंगी सी बहुरिया है।
सूर्य बना पाहून है, प्रकृति पतुरिया है।

धूप से धूमिल अरुणिम का मग है
धूल से घुसरित, सारा अग जग है।

धरा पर सूखे सरसराते, पत्तों का जमघट है,
प्रकृति के पन्नों पर लिखाती मानो अपनी रपट है।

जलती सी झाड़ियाँ है बिखरती सी पत्तियां,
समय की भित्ति पर, मानो रिक्तियां ही रिक्तियां।

ऊँचे-ऊँचे पेड़ों पर पत्ती की रत्ती भर निशानियाँ है,
नियति के थपेड़ों की, मानो-कहती कहानियाँ है।

तकती आकाश को, बुझाने प्यास को
सावन की चाह में छिपाये हर आश को।

चिलचिलाती धूप में,लहलहाते खेत है
पकते से दाने है, जलती सी रेत है।

जलती सी धरती पर, तपती सी काया है
थकते से लोगों की, नजरे ढूँढती छाया है।

विचलित से लोग हैं, दूर बहुत गांव है
छनती सी छाव पर, बढ़ते से पाव है।

पकड़ने की दौड़ में, भागती हर छाया है
इस छलनामय जगत की, बस यही माया है l

दण्ड

न्याय के तराज़ू पर -
आज अन्याय का पलड़ा भारी है,
विचार करें हम सभी -
समक्ष हमारे अपराध कथा सारी है।

रोज पढ़ते हैं अखबारो में-
अपराध के किस्से-
क्या? हत्या, बलात, लूट, अपहरण हीं है
नारी के हिस्से ।

अपराध खत्म होगा नहीं,
सुधार के विचार से -
खत्म करना होगा इसे
मृत्यु दण्ड के धार से।

मृत्यु दण्ड का दंश ही
समाज को बचायेगा ।
सज़ा का कठोर अंश ही
मुक्ति हमें दिलायेगा ।

"मौत पर मौत मनाते जो, उसके मौत पर क्या विचार
छीनता, जो जन से जीवन, जीने का नहीं, उसको अधिकार ।"

फागुन

फिर फागुन आया यहाँ उतर
फागुन को अंजली में भरकर,
मैं गीत बन गई फागुन की-
फागुन ही बन गया मेरा स्वर

खुशियों की सौग़ात लिये
आया फागुन मधु-मास लिये।
फागुन ने खोले फिर नयन,
अंग अंग में छाया फिर अनंग।

जीवन में भर गया रंग,
पुलकित हुआ मेरा अंग अंग
रंग प्रेम का सबको लगाना है
मन फागुन फिर से जगाना है

फागुन ने किया, रंगों की बौछार
रंगा, तन मन और सारा संसार।
अंतः में जागा एक उद्गार
सारा जग मेरा है परिवार ।

इस फागुन के रंग में रंगकर
हर रिश्तों के संग में रहकर
सुख सुरभि सबपर लुटाना है
रंग फागुन प्रेम खजाना है ।

एक और प्रेम का बना घेरा
रंग गुलाल ने सुख सुरभि बिखेरा
आओ, सुख को सीमा नापे
आपस में मिलकर प्रेम को बाटे 1

"बनकर प्रेम परिभाषा सब, पूरी करना हर आशा सब।
स्वीकार करो मेरा यह कथ्य, निष्कंटक करना प्रेम का पथ"

बाल-श्रमिक

उनकी सुनी आँखों में है,
सिर्फ कोरी अभिलाषा।
चमक उन आँखों को देकर -
कर दो शांत पिपासा।

मुक्त इन्हें बन्धन से कर दो,
अर्थ स्वतंत्रता का जाने ।
जीवन की आशाओं का हक़ -
दो उनको भी पाने।

देश हमारा जगमग दीपक
बच्चे हैं दीपक की बाती,
लाखो गावों शहरों के -
बच्चे ही हैं, देश की थाती।

बच्चों की खुशहाली से ही
होगा देश निहाल।
शिक्षा और स्वतंत्रता का
हक देकर, कर दो इन्हें खुशहाल।

विशेष

कुहू (मेरी पोती)

सुन्दर मुखड़ा चंचल नैना,
दिखती वह बिन्दास ।
गोरे मुखड़े पर सजता है,
उसके बालों का विन्यास।

चंचल हिरणी, चतुर सयानी,
गोरा मुखड़ा लाल
काले बालों के झुरमुट से-
झाँके दमकता भाल ।

कभी उलटती, कभी पलटती,
गाती वह मल्हार ।
पास पड़ी चीजों पर,
झट से लेती झपट्टा मार ।

दादा-बाबा रटके पढ़ाती,
'अप' करके है डाँट पिलाती।
पीट के ताली खुश होती वह,
किलकारी कल्लोल मचाती ।

कलाकार वह सभी कलाएँ
जैसे उसके पास
टूटे, रुठे सब रिश्तों को-
जौड़ वह लाती पास ।

सबसे लिपटकर प्यार जताकर,
जीवन में भरती रंग ।
आँखों से आँखों में कहती,
सब रहना मेरे संग ।

रिश्तों के झुरमुट की छाया
बने शीतल स्निग्ध बयार ।
जहाँ, बैठ वह, हर रिश्तों में
बाटे अपना प्यार ।

चंचलता उसके चेहरे पर,
मासों में, मधुमास ।
सावन की वह सुखमय झड़ी है,
सबकी, बुझाये प्यास ।

सूने घर में, आज गुंजती,
चतुर्दिक उसकी वाणी।
कितना मधुमय, सुखमय घर मेरा,
जहाँ है " कुहू" रानी।।

नन्ही

मन के झरोखे से, दूर तक झांकती हूँ,
नन्ही की आकृति को, अल्पना सा आँकती हूँ।

यादों के चित्र देख, बनाती हूं पगचिन्ह,
समय के अन्तराल पर, छोटा-बड़ा भिन्न-भिन्न।

यादों को उसकी मैं, भावों से तौलती है,
खुद ही मुस्काकर, तुतला कर बोलती हूँ।

मेरे अंतस के पट, आकर वह खोलती है,
बड़ी-बड़ी आँखों से, जैसे वह बोलती है।

चुपके से आती वह, आकर लुभाती वह,
तरसा कर मन को, छलनी कर जाती वह।

तुतलाते स्वर में, गूंज लिए प्यार की,
पहुँचती है मुझ तक झूमती बहार सी।

बड़ी-बड़ी आँखों में शोख़ियों के लिए साज़,
प्यारी सी भोली वह, नटखट और नख़रेबाज़।

उसके पावों के रुन झुन से सपने सजाती हूँ,
सपनों के पल- छिन पर, खुश हो जाती हूँ।

खुशी से भीगता है, नयन कोर, मचता हृदय में शोर
नन्हीं के थिरकन पर क्यों मेरा नहीं कोई जोर ?।

धन्यवाद ।

“मेरे अन्तस के फूल”

कुहू (“माहिका” मेरी पोती उम्र बारह साल), कुक्कू (“शनाया” मेरी नातीन उम्र दस साल) उन दोनों को मैं कैसे भूल सकती हूँ। उन बच्चों के परिश्रम ने मानों, मेरे जीवन के पन्नों पर जीवन्त हस्ताक्षर कर दिया है।

मोबाइल पर मेरी कविताओं को संग्रहित करने में दोनो ने जी तोड़ मेहनत की है। उनके उत्साह और उनकी सहभागिता से ही में पूर्ण हो पायी।

अतः उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए उन्हें आशीष और धन्यवाद।

दादी, नानी

"शैल बाला"

संक्षिप्त परिचय

नाम - **शैल बाला कुमारी,**

आश्रम चौक वार्ड न.**- 14**

अररिया,

जन्मतिथि - 19.01.1954

अररिया (बिहार)।

शिक्षा -

बी०ए० (हिन्दी-प्रतिष्ठा)

सम्प्रति - बिहार शिक्षा विभाग में शिक्षिका पद पर कार्यरत थी। वर्ष 2014 में सेवा निवृत हुई। सक्रिय लेखन वर्ष 1970 से अब तक।

रचना-

देश के स्तरिय पत्रिकाओं में कविताएँ प्रकाशित

सम्मान - भारतीय भाषा साहित्य सम्मेलन में "साहित्य सुमन" से सम्मानित। साहित्य सम्मान चयन समिति की ओर से वर्ष 2010-11 में साहित्य सम्मान।

अखिल भारतीय भाषा सम्मेलन, प्रगतिशील लेखक संघ, प्रेस क्लब अररिया एवं रेणु साँस्कृतिक मंच अररिया (बिहार) वर्ष 2008 में साहित्यिक (कविता लेखन) में साहित्य सुमन सम्मान।